और अब एक ज़िन्दा दवाई...

एक जिनेटिक रूप से परिवर्तित (जिरूप) बैक्टीरिया का उपयोग औषधि के रूप में किए जाने का समाचार है। यह जिनेटिक इंजीनियरिंग की नवीनतम उपलब्धि मानी जा रही है, हालांकि इसमें जोखिम भी कम नहीं हैं। इस बैक्टीरिया (*लेक्टोकॉकस लैक्टिस*) में इस तरह के जिनेटिक परिवर्तन किए गए हैं कि यह आंतों की सूजन कम करने में उपयोगी हो गया है। यह बैक्टीरिया अब एक मानव प्रतिरक्षा प्रोटीन बना सकता है जो सूजन को कम करता है।

अब तक जिरूप बैक्टीरिया का इस्तेमाल खाद्य पदार्थ व औषधि बनाने में तो किया गया है मगर पहली बार किसी ज़िन्दा बैक्टिरया को मानव शरीर में इस मकसद से प्रविष्ट कराया जा रहा है कि वह वहां जाकर औषधि बनाए।

इस बैक्टीरिया को एक कैप्सूल में बंद करके व्यक्ति को खिला दिया जाता है। यह कैप्सूल पेट में सुरक्षित रहता है और आंतों में पहुंचकर घुलता है। यानी बैक्टीरिया सीधे आंत में पहुंचते हैं। वहां जाकर यह इंटरल्यूकिन-10 नामक प्रोटीन बनाना शुरू कर देता है। इंटरल्यूकिन-10 का इंजेक्शन देकर देखा गया था मगर इसके कई साइड प्रभाव होते हैं और यह बहुत महंगा भी है। इसलिए बैक्टीरिया वाला रास्ता अपनाया जा रहा है। सबसे पहले तो यही देखना होगा कि क्या यह इलाज कारगर है।

इस इलाज के साथ जुड़ी कई आशंकाएं भी हैं। जैसे सबसे पहली आशंका तो यह है कि कहीं इस बैक्टीरिया का यह जीन आंतों में कुदरती तौर पर पलने वाले अन्य बैक्टीरिया में न पहुंच जाए। यदि ऐसा हुआ तो काफी हानिकारक हो सकता है।

दूसरी आशंका यह है कि यह बैक्टीरिया मल के साथ निकलेगा और मल-जल प्रदूषण के कारण अन्य व्यक्तियों के शरीर में पहुंच जाएगा। अन्य व्यक्तियों को बेकार में इंटरल्यूकिन-10 के साइड प्रभाव झेलने होंगे। वैसे शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने का कुछ इन्तज़ाम तो किया है।

उन्होंने इस बैक्टीरिया का वह जीन काटकर फेंक दिया है जो थायमिडीन बनाता है। थायमिडीन इस बैक्टीरिया के अस्तित्व के लिए बहुत ज़रूरी है। मानव आंतों में तो पर्याप्त थायमिडीन होता है, तो बैक्टीरिया का काम चल जाएगा। मगर जैसे ही यह बैक्टीरिया मल के साथ बाहर आएगा, इसे थायमिडीन मिलना बन्द हो जाएगा। सो यह मारा जाएगा। वैसे अभी कुछ व्यक्तियों पर इस बैक्टीरिया की जांच चल रही है। उन्हें एकदम अलग-थलग रखा गया है और उनके मल की पूरी जांच करके उसे सावधानी से नष्ट किया जा रहा है। मगर क्या इतनी सावधानी एक आम व्यक्ति रख पाएगा? ***(स्रोत फीचर्स)***

द्वितीय विश्वयुद्ध की एक खरपतवार का कहर

आसाम और दार्जिलिंग के चाय बागान एक खरपतवार से त्रस्त हैं। यह खरपतवार है *मिकानिया माइक्रेन्था*। इसे द्वितीय विश्व युद्ध के समय भारत में लाया गया था। इसे लाने का मकसद द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान हवाई पट्टियों को छिपाने था। मगर यहां पहुंचने पर इसे जो अनुकूल वातावरण मिला उसकी वजह से आज यह एक प्रमुख खरपतवार बन गई है। सबसे प्रमुख बात यह रही कि यहां के पर्यावरण में इसका कोई दुश्मन नहीं था। गौरतलब है कि यही स्थिति जलकुंभी की भी है, हालांकि जलकुंभी को तो उसके सुंदर फूलों के लिए लाया गया था।

मिकानिया बहुत तेज़ी से फैलती है। यह आसाम, दार्जिलिंग, पश्चिम बंगाल आदि के चाय बागानों में एक सिरदर्द बन चुकी है। इसे नियंत्रित करने के लिए रसायनों का उपयोग किया जाता है या फिर मज़दूरों से इसे उखड़वाया जाता है। दोनों ही तरीकों में काफी खर्च होता है। एक अनुमान के मुताबिक इस पर नियंत्रण के चक्कर में किसान